

पंचाग्नि तापं हिमगर्भवासः वनात्वनः संचरणं पदातिः।
अनन्यसाध्यं गिरिगह्वरेषु तपः प्रपेदे निखिलः तपिष्ठः॥१॥

भावार्थ - पंचाग्नि साधना हेतु जिन्होंने अग्नि तप को सहन किया, हिम (बर्फ) के बीच बैठकर कठिन साधनाएं करने वाले, हिंसक पशुओं से भरे एक वन से दूसरे वन में पैदल भ्रमण करने वाले, पर्वतों की अंधेरी कंदराओं में नितांत एकाकी भाव से कठोर साधनाएं सम्पन्न करते हुए गुरुदेव निखिलेश्वरानन्द जी साक्षात् तपस्या की ही प्रतिमूर्ति रहे हैं।

उनके तपोनिष्ठ व्यक्तित्व के बारे में संन्यासी आत्मानन्द जी ने कहा है कि एक बार मैं मौमुख से आगे नन्दन वन की ओर जा रहा था तभी मेरी दृष्टि एक पर्वत शिखर पर गई तो मुझे आभास हुआ कि वहां कोई विशेष बात है, अतः मैं उत्सुकतावश उस ओर चल पड़ा। थोड़ा आगे जाने पर मैं यह देखकर आश्चर्यचकित रह गया कि शीत ऋतु में बर्फ की शिला पर बैठ कर मात्र एक व्याघ्र चर्म अधोभाग पर धारण कर कोई संन्यासी बैठे हुए हैं। ऐसा लग रहा था कि शीत ऋतु का उनके शरीर पर कोई प्रभाव नहीं हो रहा है जबकि मैं स्वयं अपने आपको वस्त्रों से ढके हुए था और उस क्षेत्र में कई बार आ जा चुका हूं।

- किन्तु यह संन्यासी किसी अन्य लोक से ही आए हुए लग रहे हैं। मैं यह सोच ही रहा था कि अचानक हिमपात प्रारम्भ हो गया। मैंने भागकर पास की गुफा में शरण ली और सोचा कि वह संन्यासी भी अब अपनी तपस्या छोड़कर इस गुफा में आएंगे ही, क्योंकि आसपास कोई दूसरी गुफा नहीं थी।

- लेकिन आश्चर्य, कि हिमपात होता रहा और वह संन्यासी महोदय अडिम रूप से अपनी तपस्या में लगे रहे। घण्टे भर के बाद ही संन्यासी के स्थान पर छोटा सा हिमखण्ड दिखने लगा।

- मुझे इच्छा हुई कि जाकर उस संन्यासी को किसी प्रकार ले आऊं, जिससे उनकी जीवन रक्षा हो सके किन्तु तीव्र हिमपात के कारण मैं ऐसा नहीं कर सका।

प्रकृति भी जैसे उनकी परीक्षा ले रही थी, तभी तो पूरे चौबीस घण्टों के बाद हिमपात रुका।

मैंने बाहर निकल कर उनकी ढूंढने का प्रयास प्रारम्भ किया, जगह-जगह से बर्फ हटाना शुरू किया, तभी कुछ दूर पर एक आश्चर्यजनक घटना होती दिखी।

एक हिमखण्ड पिघल-पिघल कर जल रूप में परिवर्तित हो रहा है, उस ऋतु में यह क्रिया आश्चर्यजनक ही तो थी। थोड़ी देर बाद जब वह हिमखण्ड लगभग आधा पिघल गया, तो मैं स्वयं ही प्राणिपात हो गया उन दिव्य संन्यासी के सम्मुख, क्योंकि वे अब भी अडिम भाव से अपनी तपस्या में रत दिखे। उनकी तपः रश्मियों से ही हिमखण्ड पिघला, यह तो स्पष्ट हो गया।

जब मैंने ध्यान के द्वारा अपने गुरुदेव से सम्पर्क स्थापित कर उन दिव्य तपोनिष्ठ संन्यासी के बारे में जानना चाहा तो यह जानकर कि दृढ़ निश्चय, अडिमता, मनोबल और तप की साकार मूर्ति ये भगवत पूज्यपाद स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी ही हैं, मैं स्वयं ही कृत-कृत्य हो गया।

समाज में विविध प्रकार की आलोचना-प्रत्यालोचनाओं के झंझावात में अडिम रूप से मुस्कराते हुए अपने शिष्यों की विविध समस्याओं से आज भी रक्षा करते हैं, यह उनकी तपोनिष्ठता है।

सद्गुरुदेव योगी स्वरूप

जीवं शिवेन योक्तारं भोगमोक्ष प्रदायिनं ।
लोक संग्रह कर्तारं वन्दे योगीश्वरं गुरुम् ॥५॥

अर्थात् - जीव को शिव से जोड़ने वाले, साधकों को मोक्ष के साथ भोगों की पूर्णता देने में समर्थ, शिष्यों व साधकों के कल्याण के लिए सतत् कार्यरत रहने वाले योगीराज गुरुदेव निखिलेश्वरानन्द जी को मैं श्रद्धापूर्वक नमन अर्पित करता हूँ।

मौमुख के निकट विचरण करने वाले
में जोधपुर आए थे, तभी उन्होंने
को बताया था। उन्हीं के शब्दों

‘यह मेरे जीवन का
निखिलेश्वरानन्द जी का
व्यक्तिगत सेवा का एक
जाने कितने जन्मों के
दिन गुरुदेव ने मुफा के
धोकर आ जाने की कहा।
होकर मैं नेत्र झुकाए उनके
ने मुझे अपनी आंखों की
कहा।

मैंने देखा, कि गुरुदेव मेरे
अंगुष्ठ को तेजी से दबा रहे
सिर के मध्यम भाग पर जोरों
इस प्रहार को मैं संभाल न पाया
अंधेरा छा गया है।

थोड़ी देर में मेरे सामने वह व तारा मण्डलों समेत पूरा ब्रह्माण्ड फैला था। एक और नील वर्ण का
प्रकाश पुंज था जिसमें गुरुदेव विराजमान थे, मैंने देखा कि शून्य से समस्त देवी-देवता, समस्त चर-
अचर प्रकट होकर उनमें विलीन होता जा रहा है। थोड़ी देर में मुझे लगा कि मैं भी उन्हीं में समाता
जा रहा हूँ। मेरे सिर में चक्कर आने लगा और मेरी समाधि टूट गई। सामने पूज्यपाद गुरुदेव मुस्करा
रहे थे।

यह तो पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा अपने एक शिष्य पर हुए शक्तिपात जैसी उच्च योगिक क्रिया का
वृत्तांत है। सद्गुरुदेव ने तो कितने ही साधकों व शिष्यों की कुण्डलिनी जाग्रत की है। अनेक जीवों को
विराट सत्ता से साक्षीभूत कराया है और आत्म-परमात्मा के इस मिलन को ही तो योग कहते हैं।
पूज्यपाद ने राजयोग, क्रिया योग, दीक्षा योग, मंत्र योग, कुण्डलिनी योग आदि अनेक विधियों से
शिष्यों को ज्ञान दिया, वे तो योगेश्वर हैं।

स्वामी वेदज्ञानन्द जी नवरात्रि के शिविर
गुरुदेव सम्बन्धित अपने अनुभवों
में-

सौभाग्य रहा है कि
शिष्यत्व मिला और उनकी
माह अवसर मिला और न
पुण्य एकत्र हुए थे, कि एक
उस विशेष कक्ष में महा
उनके चरणों में प्राणिपात
सम्मुख बैठ गया। गुरुदेव
पूरी तरह खुले रखने की

मस्तक पर अपने दाहिने
हैं, थोड़ी देर में उन्होंने मेरे
से अपनी हथेली से प्रहार किया।
और मुझे ऐसा लगा, कि मेरे सामने





कर्ता मंत्र तंत्राणां यंत्राणां सर्व तत्त्ववित् ।
ब्रह्मवर्चस्व मापन्नः ऋषिराज अधिष्ठितः ॥३॥



अर्थात् - मंत्र तथा तंत्र के शास्त्र रचनाकार, यंत्र निर्माण की विधि की सम्पूर्णता से जानने वाले ब्रह्मतेज से मंडित गुरुदेव नारायण साक्षात् ऋषिराज कहे गये हैं।

बद्रीनाथ की यात्रा में एक बार, जिस स्थान पर पूज्य गुरुदेव निवास कर रहे थे, वहीं का एक स्थानीय व्यक्ति गुरुदेव से मिलने आया। चरणों में प्रणाम अर्पित कर उसने गुरुदेव से कहा कि उसने गुरुदेव के संदर्भ में काफी कुछ सुन रखा है और इसी क्रम में वह भगवान शिव के प्रत्यक्ष दर्शन के लिए कोई मंत्र चाहता है।

गुरुदेव तो स्वयं ही शिव हैं, लुटाने में सबसे आगे, उन्होंने झट ही उसकी मंत्र दे दिया। युवक ने बड़ी निराशा से अपनी असमर्थता व्यक्त की और कहा, गुरुदेव! मुझसे 'म्' का उच्चारण

नहीं हो पाता है।

पूज्यगुरुदेव को उसके ऊपर दया आ गई। उन्होंने तुरन्त कहा, एक दूसरा मंत्र है, यह मैंने खास तैरे लिए ही बनाया है, इसमें तुझे 'म' का उच्चारण नहीं करना पड़ेगा, जा तुझे शिव के इसी मंत्र से दर्शन होमैं।'

यह तो पूज्यपाद के मंत्र सृष्टा, ऋषिरूप की एक ही झलक है। पूज्यपाद सद्गुरुदेव ने देश एवं विदेश के अनेक साधनात्मक शिविरों में युग की देखते हुए अनेक नवीन मंत्रों का सृजन किया, नवीन तंत्र पद्धतियों की स्थापित किया तथा लुप्त हुए शास्त्रों की पुनः स्थापित किया।

उनके लिए ऋषि शब्द का उद्बोधन तो अत्यल्प प्रतीत होता है, क्योंकि वे तो समस्त ऋषियों के पुज्यभूत स्वरूप ही हैं।

सर्वश्रेष्ठ एवं ऋषियों में भी परम वन्दनीय ऋषिगण निम्नवत् हैं, जिनका उल्लेख कूर्म पुराण, वायु पुराण तथा विष्णु पुराण में भी प्राप्त होता है। इन ऋषियों ने समय-समय पर शास्त्र तथा सनातन धर्म की मर्यादा बनाए रखने के लिए सतत् प्रयास किया है। अतः ये आज भी हम लोगों के लिए वन्दनीय हैं - ऋषभ, मनु, भारद्वाज वशिष्ठ, वाचस्पत्य, नारायण, कृष्ण द्वैपायन, पाराशर, गौतम, वाल्मीकि, साकश्यत, यम, आतर्विक्ष धर्म, अप्ववा, ऋषभ, सोममुख्यायन, विश्वामित्र, मुद्गाल, निखिल ...

सद्गुरुदेव मुनि स्वरूप

मननात् सर्व मंत्राणां महद्भिः परिमाननात् ।
मार्गणाच्चैव शिष्याणां मुनिश्चेति पदाभिधः ॥२॥

अर्थात् - मंत्रों के निरंतर मनन करने से, विद्वानों द्वारा माननीय होने से, समर्पित एवं श्रद्धालु एवं शिष्यों एवं साधकों की स्वीकृति करके उन्हें शरणमति प्रदान करने के कारण गुरुदेव नारायण, मुनिवत् सतत् वंदनीय हैं।

उन दिनों हरिद्वार में ज्यादा भीड़-भाड़ नहीं होती थी। चारों तरफ मनोरम वन थे, वहीं पतित पावनी गंगा के तट पर श्रीगुरुदेव ने मंत्र तथा साधनाओं के अनुष्ठान में इतने निमग्न थे कि वे भूल ही गए, कि मैंने चार दिन से अन्न का एक दाना भी नहीं ग्रहण किया है।

पास के गांव से गुरुदेव का शिष्य थोड़ा आटा लेकर आया और गुरुदेव ने जल्दी से पूरे आटे की एक रोटी बनाकर आग में डाल दी। भूख की तीव्रता इतनी बढ़ गई कि मन में कहा रोटी थोड़ी सी सिक गई है, तोड़ कर खा लूं।

मन को समझाया, इतनी भी क्या व्याकुलता? किन्तु अगले ही पल मन नहीं माना और एक टुकड़ा तोड़कर जैसे ही मुंह के पास ले गए, तुरन्त अपने आप मन क्लानि और क्षीभ से भर उठा - क्या मेरा नियंत्रण मन पर से समाप्त हो गया है?

ऐसा विचार उठते ही गुरुदेव ने पूरी रोटी उठाकर गंगा में डाल दी और प्रण किया कि अब मैं पुनः दस दिन तक अन्न ग्रहण नहीं करूंगा और फिर वे मंत्र साधना के अनुष्ठान में रत हो गए।

वचन और कर्म के द्वारा वे मन पर सदैव विजयी ही रहे। वे तो सदैव शिष्यों को मन की आंखों से ही देखते रहे हैं और एक समर्थ मन ही दूसरे के मन की बात जान सकता है। अतएव आज भी शिष्यों के मन की बात सद्गुरुदेव के पास पहुंचती ही है।



महावक्त्रः महावक्ता मांगलिकः महामुनिः ।
मुनिमानस हंसोऽयं मार्तण्डः मधुराकृतिः ॥
आप योगी हैं, योगेश्वर हैं, मंगलमय हैं, देवपुरुष हैं और अनन्त सौन्दर्यमय हैं, आप शिष्यों और साधकों के हृदय रूपी मानसरोवर में विचरण करने वाले राजहंस हैं। आपको बारम्बार प्रणाम स्वीकार हो।